ISSN : 2348-7933

अनुसंधान समन्वय पत्रिका

(A Quarterly Research Journal of Humanities & Social Sciences)

वर्ष-1, अंक-2, जुलाई-सितम्बर, 2014

ISSN : 2348-7933

अनुसंधान समन्वय पत्रिका

(A Quarterly Research Journal of Humanities & Social Sciences)

वर्ष-1, अंक-2, जुलाई-सितम्बर, 2014

प्रधान संपादक
डॉ० राकेश सिंह
संपादक
डॉ० (श्रीमती) सरिता सिंह
डॉ० धीरेन्द्र कुमार पटेल
डॉ० जय कुमार मिश्र
डॉ० रवीन्द्र कुमार सिंह
उप संपादक
डॉ० गौतम आनन्द सिंह
डॉ० बृजेश प्रताप सिंह
नीरज कुमार सिंह
प्रमोद यादव

प्रकाशक
भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रब्यूटर्स
लेखेश्वर काम्लेक्स, नाका बाईपास, इलाहाबाद मार्ग, फैजाबाद-224001 (उ० प्र०)

पृष्ठ संख्या

38. मुसाफिरखाना (जनपद सुल्तानपुर) में भूमि संसाधन एवं जनसंख्या सन्तुलन का एक भौगोलिक अध्ययन मनीष कुमार सिंह एवं डॉ0 एस0 पी0 सिंह — 99
39. प्रेमचन्द पर गाँधी दर्शन का प्रभाव–डॉ0 (श्रीमती) शीला सिंह — 104
40. दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना–ममता सिंह एवं डॉ0 सरोज सिंह — 106
41. भारतीय समाज में महिलाओं का स्थानः एक ऐतिहासिक अवलोकन (श्रीमती) मीता सिंह एवं डॉ0 विपिन बिहारी लाल — 108
42. जमानिया तहसील (जनपद–गाजीपुर) में आश्रित–अनुपात का एक भौगोलिक विश्लेषण–जगदीश विश्वकर्मा — 110
43. महिला सशक्तीकरण और अनिवार्य शिक्षा–भावना सिंह — 113
44. सन्त सहित्य में लोकजीवन एवं आदर्श–डॉ0 अवधेश कुमार श्रीवास्तव — 115
45. जैनेन्द्र के कथा साहित्य में कथावस्तु–शिल्प–डॉ0 पूनम तिवारी — 117
46. भारत में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का आलोचनात्मक मूल्यांकन (आज़मगढ़ जनपद के विशेष सन्दर्भ में) पवन कुमार श्रीवास्तव एवं डॉ० अशोक कुमार मिश्र — 120
47. रश्मिरथीः सामाजिक असमानता का आख्यान–(श्रीमती) रागिनी यादव — 122
48. डॉ0 भीमराव अम्बेडकर और हिन्दू–धर्म डॉ0 पतिराम राव — 124
49. वेदों एवं स्मृतियों में नारी विषयक अधिकार–अर्चना सिंह — 126
50. बहुत नाम हैं एक 'शमशेर' भी है–डॉ0 अनिल कुमार सिंह — 128
51. भारतीय शिक्षा दर्शन–संजीव कुमार चतुर्वेदी — 131
52. समकालीन स्त्री लेखन और स्त्री–मुक्ति आन्दोलन–(श्रीमती) सविता दुबे — 134
53. तोड़ती पत्थरः स्त्री अस्मिता का संघर्ष–डॉ0 धीरेन्द्र कुमार पटेल — 136
54. डॉ0 रामविलास शर्मा का छायावादी काव्य–विमर्श डॉ0 राकेश सिंह — 139
55. भारतीय जाति व्यवस्था और बाबासाहब भीमराव अम्बेडकर के विचारों का मूल्यांकन डॉ0 अरुण कुमार दूबे — 141
56. मानवाधिकार और सामाजिक न्याय–डॉ0 राजेश कुमार सिंह — 145
57. छद्म मुक्ति का नारी विमर्श–डॉ0 रवीन्द्र कुमार सिंह — 148
58. चिन्तन की विधियाँ–उमेश कुमार सिंह — 150
59. पर्यावरणीय चिन्तन में पीपल की उपयोगिता–डॉ0 महारुद्र सिंह — 152
60. प्राचीन भारतीय शिक्षा का स्वरूप–डॉ0 अवनीश कुमार सिंह — 154
61. अंधायुग : मानवीय आस्था का नाट्यकाव्य–डॉ0 संजय कुमार श्रीवास्तव — 157
62. मिथक–आदिम मानस की लोकचेतना–डॉ0 (श्रीमती) सीमा श्रीवास्तव — 159
63. A Study on Socio-economic Status of Breast Cancer Patients-Dr. Sweta Rai & Dr. Saroj Singh — 161
64. The Role of Commonwealth Youth in 21st Century -Dr. Sarita Singh — 163
65. Responsible factors and Issues of Traditional Academic Libraries for Transformation in to Modern Academic Libraries- Pramod Yadava — 167
66. Comparative Study of Physical Fitness between the Players of Individual and Team Randhir Kumar & Dr. Krishna Kant Sahu — 171
67. Nutrition and Cervical Cancer-Anu Yadav — 174
68. Contemporary Consciousness and Female poets of the Recent Indo- english Literature Suneel Kumar Singh — 177
69. Rural Financing Scenario and Rural Development in India Nagendra Pratap Bharati & Dr. Rajesh Kesari — 180

मानवाधिकार और सामाजिक न्याय

डॉ0 राजेश कुमार सिंह*

सच्ची शांति और आजादी तभी हासिल की जा सकती है, जब हम प्रत्येक व्यक्ति प्रदत्त मानवीय गरिमा का सम्मान करें और ऐसी सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक व्यवस्था करें, जो सबके लिए समान और न्यायपूर्ण हो। इस सच को हम दो विश्व युद्धों की विभीषिका झेलने के बाद स्वीकार कर पाये है। मानवाधिकारों का सार्वभौम घोषणापत्र भले ही औपचारिक रूप से सभी राष्ट्रों पर बाध्यकारी नहीं हो, लेकिन अंतर्राष्ट्रीय कानून का हिस्सा होने के नाते यह दुनिया भर के देशों की राष्ट्रीय चेतना को प्रभावित करती है और उन पर अपने देशवासियों हेतु अधिकार व न्याय सुनिश्चित करने के लिए नैतिक दबाव बनाती है।

मानवाधिकार वह पावन अधिकार है जिसे कौटिल्य ने धर्म की संज्ञा दी है। भारतीय मनीषियों तथा चिन्तकों ने अपने चिन्तन के आरम्भ से ही हमेशा मनुष्य की अस्मिता को केन्द्रिय परिधि में सरखते हुए उसे महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। यहाँ पर मनुष्यता या धर्म को श्रेष्ठ या ऊँचा धर्म कहा गया है। महाभारत के रचयिता महर्षि वेदव्यास ने कहा है–'न मानुषात् परतर किंचिदस्ति, अर्थात् मनुष्य से परे या ऊँचा कोई दूसरा धर्म नहीं है। राष्ट्रकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इसी बात को मनुषेर धर्म की श्रेष्ठता कहा है। हमारी संस्कृति में मनुष्यता या इंसानियत को सबसे बड़ी कसौटी मानने पर सदियों से बल दिया जाता रहा है, पर बदलते हुए समय के साथ समाज में परिवर्तन आना भी स्वाभाविक था। अच्छे आदर्शों के बावजूद समाज में अनेक तरह के विकार पैदा होते चले गये। जिसके अनेक ऐतिहासिक सामाजिक सांस्कृतिक और आर्थिक कारण रहे होंगे, पर इतना तो सही है कि कर्म के स्थान पर जाति, राजा–प्रजा में अन्तर तथा संकीर्णता तथा धर्मान्धता के कारण समाज में भेदभाव व शोषण को निरन्तर बढ़ावा मिला। इन सबका नकारात्मक परिणाम घृण, हिंसा, भाईचारे की कमी तथा सामाजिक द्वेष के रूप में हमारे सामने है। आज समाज के ताने–बाने को कई तरीके से चुनौती मिल रही है, जो चिन्ता का विषय है। इस दृष्टि से आवश्यक है कि अपने अधिकारों के प्रति आम जनमानस में जागरूकता अभियान का श्रीगणेश किया जाय तथा उन्हें सजग भी किया जाय। लोकतन्त्र में सामाजिक सद्भाव और न्यायपूर्ण व्यवस्था करने के लिए यह आवश्यक है कि मानवाधिकार विषयक प्रावधान व चिन्तन सभी के लिए सुलभ और उन्हीं की भाषाओं में हो। पं0 जवाहरलाल नेहरू ने भी मानवाधिकार को स्पष्ट करते हुए कहा था कि यह सभ्यता का सार है जो मानव के व्यक्तिगत जीवन, उसकी गरिमा, समानता और स्वतन्त्रता के लिए आवश्यक है।

–मानव अधिकार का अर्थ है, जाति, लिंग, भाषा अथवा धर्म के भेदभाव के बिना सब लोगों के मूल स्वतन्त्रताओं की रक्षा करना तथा उनमें वृद्धि करना एवं उनके प्रति सम्मान का भाव जगाना। ये सामाजिक जीवन की अनिवार्य आवश्यकताएँ हैं, जिनके बिना न तो व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकता है, और न ही समाज के लिए उपयोगी कार्य कर सकता है। राज्य का सर्वोत्तम लक्ष्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास है। इस कारण राज्य के द्वारा व्यक्ति को कतिपय सुविधाओं का नाम ही अधिकार है। मानवीय अधिकारों की सुव्यवस्थित सोच उन्हें संगठित रूप देने का प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास 25 सितम्बर 1926 को दासता के विरुद्ध शंखनाद करते हुए विश्व सम्मेलन के रूप में उभर कर सामने आया। उसके बाद 1930 में बलात् श्रम पर सम्मेलन हुआ और उसके 18 साल के अन्तराल के पश्चात् मानवाधिकारों की पहली सुव्यवस्थित घोषणा 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ की साधारण सभा में की गयी। मानवीय अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा में कहा गया कि मानवाधिकार मानव परिवार की स्वाभाविक प्रतिष्ठा एवं सम्पन्न विश्व में शान्ति, स्वाधीनता की नींव है।

1776 में संयुक्त राज्य अमेरिका ने अपने स्वाधीनता की घोषणा में कहा था कि सभी व्यक्ति समान बनाये गये हैं तथा विधाता ने उन्हें कतिपय अनन्य अधिकार प्रदान किये हैं, जिसमें इनके जीवन स्वतंत्रता और सुख प्राप्ति हेतु प्रयत्न के अधिकार शामिल हैं। फ्रांस ने 1789 में व्यक्ति और नागरिक के अधिकारों की घोषणा पत्र में कहा था कि मानव के नैसर्गिक अधिकार सभी मनुष्यों को जन्मजात प्राप्त होते हैं तथा सभी समान अधिकार लेकर पैदा होते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद यह स्पष्ट हो चली थी कि विश्व में न्याय और शान्ति तभी स्थापित हो सकेगी, जब सभी लोग के मानवीय सम्मान का आदर किया जायेगा। उसके प्रति अनादर से ही मानव जाति की अन्तरात्मा को चोट पहुँचती हैं। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए मानवाधिकार के घोषणा पत्र में भाषण व विश्वास की स्वतंत्रता तथा दुःख और आभाव से मुक्ति को लोगों की सर्वोच्च अभिलाषा के रूप में मान्यता दी गयी। घोषणा पत्र में 30 अनुच्छेद हैं, जिनका विस्तार बाद में हुई अन्तर्राष्ट्रीय संधियों, क्षेत्रीय मानवाधिकार व्यवस्था, राष्ट्रीय संविधानों और कानूनों में हुआ है। सार्वभौमिक मानवाधिकार विधेयक अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार सन्धि और अन्तर्राष्ट्रीय नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार सन्धि और उसके दो समझौतों ने सन् 1976 में अन्तर्राष्ट्रीय कानून का रूप ले लिया है। तदोपरान्त वर्ष 1993 में वियना घोषणा में लोकतंत्र, आर्थिक विकास और मानवाधिकारों की अन्तर्निर्भरता को स्थापित किया गया। अधिकारों के अविभाज्य अन्तर्निर्भर और परस्पर सम्बन्धित होने की अवधारणा को जन्म दिया और संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त के पद के सृजन का मार्ग प्रशस्त किया। वियना घोषणा–पत्र करने वाले देशों में भारत भी शामिल हैं।

मानवाधिकारों के प्रति भारत की निष्ठा संविधान के विविध प्रावधानों में स्पष्ट देखी जा सकती है। लेकिन, यथार्थ के धरातल पर उन्हें सुनिश्चित करना निश्चय ही आसान नहीं है। दुनिया का सम्भवतः कोई दूसरा ऐसा देश नहीं है जहाँ इतनी विभाजनकारी और विविधतापूर्ण प्रवृत्तियाँ हो। यह विविधता क्षेत्र, धर्म, लिगं, जाति, भाषा आधारित हैं। आर्थिक और शैक्षिक स्थिति

आधारित भेद भी यहाँ व्याप्त हैं। इनके अलावा शारीरिक और इससे जुड़ी अक्षमताओं से ग्रस्त लोग तथा आतंरिक झगड़ों, प्राकृतिक आपदाओं, औद्योगिकरण आदि से बेघर हुए लोग हैं, जिनके अधिकारों की रक्षा जरूरी हैं। आर्थिक विकास और तीव्र नगरीकरण के परिणामस्वरूप अन्य कई कमजोर तबके सातने आए हैं जिनमें विस्थापन के शिकार, झुग्गी–बस्तियों में रहने वाले लोग, औद्योगिक श्रमिक तथा पर्यावरण–क्षरण से प्रभावित लोग शामिल है। इसलिए जब भारत में सभी नागरिकों के लिए मानवाधिकार और सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने की चर्चा होती है तो वह एक छोटे से, सरलता से संभाले जाने योग्य, समजातीय आबादी के मानवाधिकारों की चर्चा नहीं होती। वह वस्तुतः एक अरब से ऊपर विविधतापूर्ण जनशक्ति के लिए मानवाधिकार सुनिश्चित करने से जुड़ी होती है, जिनके हित कई बार सीधे–सीधे एक–दूसरे से टकराते प्रतीत होते हैं।

भारत सरकार के गृह मंत्रालय के उपक्रम जनगणना निदेशालय द्वारा जारी आँकड़े के अनुसार भारत में अभी भी पुरुष साक्षरता 82.14 प्रतिशत तथा महिला 65.6 प्रतिशत है। यानी भारत में कुल साक्षरता 74.04 प्रतिशत है जिसका अर्थ है कि अभी भी हमारे देश में लगभग 26 प्रतिशत आबादी निरक्षर है। अनुमान है कि 6–14 वर्ष तक की आयु के 63 मिलियन बच्चे स्कूल नहीं जा रहे हैं। 135 मिलियन लोगों के लिए अभी तक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र उपलब्ध नहीं हैं। 225 मिलियन लोगों के लिए शुद्ध पेयजल का आभाव है। 640 मिलियन लोगों के लिए प्रारम्भिक आरोग्यदायक सुविधाओं का आभाव है। 15–49 वर्ष तक की आयु की गर्भवती महिलाओं में रक्तअल्पता के लक्षण विद्यमान है। भोजन और पोषण के आभाव में पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चे जिनकी संख्या 62 मिलियन है, वे कुपोषण ग्रस्त है, 16 वर्ष से कम आयु के करीब एक तिहाई बच्चे बाल श्रमिक के रूप में काम कर रहे हैं। पूरी दुनिया की आबादी के एक तिहाई निर्धन व्यक्ति भारत में ही रहते हैं। भारतीय जेलों में क्षमता से कई गुना अधिक कैदी बंद पड़े हैं, जिनमें ज्यादतर विचाराधीन कैदी है। 1948 से लेकर 1986 तक 12 अधिनियम पारित करने के बावजूद तथा भारतीय संविधन के अनुच्छेद 23, 24, 39, 47, 45 और 47 के रहते हुए भी बालश्रम की समस्या बनी हुई है। और आज भी काफी संख्या में बाल श्रमिक संकटपन्न उद्योगों में काम कर रहें हैं।

भारत में मानवाधिकार के संरक्षण का मुख्य सैद्धान्तिक आधार सन् 1993 के मानवाधिकार अधिनियम में निहित हैं। यह कानून संविधन की धारा 51 के अंतर्गत दिये गये निर्देशों के अनुकरण में और वियना सम्मेलन में दिये गये भारत के वचन को ध्यान में रखते हुए बनाया गया है। इस कानून ने मानवाधिकारों की परिभाषा अधिकारों (भारतीय संविधान में प्राप्त स्वतंत्रता समानता और व्यक्तिगत सम्मान से जुड़े अधिकारों) तथा अंतर्राष्ट्रीय संधियों के अनुसार की गयी है। भारत 16 अंतर्राष्ट्रीय संधियों में शामिल हैं, जिनमें प्रमुख हैं, आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार प्रसंविदा, अंतर्राष्ट्रीय सिविल तथा राजनीतिक अधिकार प्रसंविदा, बच्चों के अधिकार विषयक प्रसंविदा, महिलाओं के राजनीतिक अधिकार विषयक प्रसंविदा। मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, राज्यों में राज्य मानवाधिकार आयोग, राज्यों में राज्य मानवाधिकार आयोग और मानवाधिकार न्यायालय स्थापित करने का प्रावधान किया गया है। जिससे की मानवाधिकार और इससे जुड़े मामलों को बेहतर ढंग से संरक्षण प्रदान किया जा सके। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का अध्यक्ष वही व्यक्ति हो सकता है, जो उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायधीश रहा हो। कतिपय राज्यों यथा, पश्चिम बंगाल, हिमांचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, असम, तमिलनाडु, गुजरात, राजस्थान, मणिपुर, केरल, पंजाब, और जम्मू कश्मीर में राज्य स्तरीय, मानवाधिकार आयोग गठित किये जा चुके हैं। मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 की धारा 30 में मानवाधिकारों के उल्लंघन सम्बन्धी अपराधों की शीघ्र सुनवाई उपलब्ध कराने के लिए मानवाधिकार न्यायालय अधिसूचित करने की परिकल्पना की गई है। आंध्रप्रदेश, असम, सिक्किम, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश जैसे अनेक राज्यों में इस प्रकार के न्यायालय स्थापित किये गये हैं।

दरअसल वैश्वीकरण के इस दौर में कल्याणकारी राज्य की अवधारणा गौण होने लगी है। पूरी दुनिया में गाँवों रहने वाले किसानों, शिल्पकारों, मजदूरों सहित गरीब आबादी को उन्हीं के भाग्य पर छोड़ दिया गया। बढ़ती हुई बेरोजगारी और मँहगाई के बीच जैसे अमीरी–गरीबी का फासला बढ़ता गया वैसे ही सामाजिक विषमता, भुखमरी से मौत और किसानों की आत्महत्या जैसी घटनाएँ भी बढ़ती गयीं, अर्थात् सामाजिक न्याय सिद्धांत अप्रभावी होता गया। यह संताप केवल भारत ने ही नहीं, अपितु पूरी दुनिया ने झेला। गौरतलब है कि विकास की छद्म दुनिया की आबादी का 5 वाँ भाग हमेशा भूखा रहता है। प्रत्येक 2 सेकण्ड में एक बच्चे की मौत बीमारी से हो जाती है। दुनिया के 150 करोड़ लोगों के लिए स्वास्थ्य सुविधाएँ मौजूद नहीं है। राबर्ट मैक्नारा की रिपोर्ट के अनुसार पूरी दुनिया की अबादी का लगभग 20 प्रतिशत अत्यन्त गरीबी का शिकार है। विकास देशों के ज्यादातर लोग 150 अमरीकी डालर में ही वर्ष भर गुजारा करते हैं। गरीब देशों के लगभग 35 हजार लोग प्रतिदिन भूख से तड़पते हुए मर जाते हैं, दुनिया के 82.5 प्रतिशत युवा अशिक्षित हैं, दुनिया के 1.4 अरब लोगों को पीने का शुद्ध पानी मुहैया नहीं है। 45 करोड़ से अधिक लोग शारीरिक मानसिक रूप से विकलांग है। ऐसा क्यों है ? क्या दुनिया ने तरक्की नहीं नहीं की है? नहीं, इसलिये कि इंसान लालची और मतलबी हो गया है और दूसरा, इसलिए भी राज्यों की भूमिका अत्यधिक कमजोर हो रही है। इसका एक कारण राष्ट्र–राज्य की सामरिक हथियारों की लिप्सा भी है। दुनिया के तमाम राष्ट्र अपने नागरिकों को भूख और गरीबी से मुक्ति दिलाने के बजाय हथियारों की खरीद पर ज्यादा जोर देते हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार एक लड़ाकू विमान की कीमत से एशिया व अफ्रीका के गाँवों में लगभग 15 हजार हैण्डपम्प लगाये जा सकते हैं। क्या इन बहुमूल्य और जीवनोपयोगी सुविधाओं से वंचित रहते हुए मानवाधिकार व सामाजिक न्याय का दावा करना उचित होगा? तमाम असमानताओं और उनसे हुए मानवीय अधिकारों के हनन ने दुनिया में ऐसे स्वरों को उभारने का अवसर दिया, जो उन संस्थाओं या देशों को निशाना बना रहे हैं, जो पूँजीवादी के हिमायती या उसका नेतृत्व करने वाले हैं।

जरूरत इस बात की है की है कि दुनिया आर्थिक विकास के साथ ही सामाजिक न्याय का ढाँचा भी दुरुस्त करें। यूँ तो मानवता की दुहाई देकर नागरिकों के अधिकारों की बात अनेक सरकारों की तरफ से उठती रही है, किन्तु ज्यादातर सरकारों की दोहरी नीति के कारण ये बातें सिर्फ बात तक ही रह गयी है। यहाँ तक कि अमेरिका तथा ब्रिटेन इस क्षेत्र में अपने राष्ट्रीय हितों के कारण अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकारों के संरक्षण में कुछ खास सफलता हासिल नहीं कर सके। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ब्रिटेन का इतिहास असीमित शोषण कर रहा है। नव उपनिवेशवादी नीतियों को लेकर अमेरिका को काफी बदनामी झेलनी पड़ी है। अफ्रो–एशियाई देश तथा लातिन अमेरिका तमाम देशों में तानाशाही शासन रहे हैं। फलस्वरूप वहाँ की सरकारें और शासन से अधिक अपेक्षा करना व्यर्थ है। इजराइल, दक्षिण अफ्रीका और चिली ऐसे देशों में शुमार हैं, जो विरोधियों को कुचलने, राजनीतिक शत्रुओं को बंदी बनाने और यातना देने की नीति पर अग्रसर हैं। एमनेस्टी इण्टरनेशनल की प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार 84 प्रतिशत मृत्युदण्ड चीन, ईरान, वियतनामा और अमेरिका में दिया जाता है। इसी रिपोर्ट के अनुसार दुनिया के 15 देश ऐसे हैं जिन्होंने मृत्युदण्ड को युद्ध अपराध तक सीमित रखा है। दुनिया के 34 देशों की सेनाओं ने जिसमें भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका व नेपाल भी शामिल है, हिंसा व हत्या की कार्यवाही की। स्पष्ट है कि समय रहते इस दिशा में उचित और ठोस कदम नहीं उठाये गये, दुनिया की तरक्की व विकास के साथ सामाजिक न्याय का ढाँचा दुरुस्त नहीं किया गया, तो इस दुनिया को अराजकता का शिकार होने से नहीं बचाया जा सकेगा। आज विश्वग्राम की परिकल्पना से अभिप्रेत होकर हम आगे बढ़ रहे हैं, जहाँ पूरी दुनिया में एक साथ डूबने और उतारने की प्रवृत्ति समाहित हैं। इस दुनिया का सबसे खतरनाक चरित्र है, पूँजी का एकमार्गी प्रवाह और इसके ठीक विपरीत दिशा में गरीबी का बहाव। राष्ट्रों के मध्य असमान समृद्धि ने वैश्विक न्याय को प्रभावित किया है और राष्ट्रों के मध्य चल रही प्रतिस्पर्द्धा तथा डार्विन के सर्वश्रेष्ठ की उत्तरजीविता के सिद्धान्त पर आधारित बाजारवादी विकास ने सामाजिक व आर्थिक न्याय को नैपथ्य की ओर ढकेल दिया है। जो निश्चय ही विश्व मानवता के लिहाज से खतरनाक है।

यदि भारत की स्थिति पर गौर करें तो यहाँ भी बड़ा अतर्विरोध दिखाई देता है। जहाँ एक तरफ देश का एक बड़ा हिस्सा इस समृद्धि का ढिढोरा पीट रहा है, वहीं दूसरी तरफ देश का एक बड़ा हिस्सा इस समृद्धि से कोसों दूर है। अमीर और गरीब को विकास की एक लाठी से हाँकने की प्रवृत्ति के कारण अमीर और अमीर होते चले जा रहे हैं और गरीब और गरीब। ट्रिकल डाउन थ्योरी पूरी तरह से फेल हो रही है। कल्याणकारी राज्य की अवधारणा धीरे–धीरे गौण होती जा रही है। इस वजह से आर्थिक उत्पादन की अपेक्षा वितरण की समस्या पैदा हाती जा रही है, क्योंकि भारत में मूल समस्या अब केवल उत्पादन की नहीं हैं, बल्कि इसके साथ–साथ समान वितरण की भी है। हमें मानवाधिकार के मामले में अभी लम्बी यात्रा तय करनी है। भारत में जहाँ महिलाएँ सशक्तीकरण के मार्ग पर सतत् अग्रसर हैं, वहीं आये दिन होने वाली हिंसा और उनके साथ किये जाने वाले उत्पीड़न तथा शोषण की घटनाएँ भी बढ़ती जा रही है। बड़ी तादाद में बच्चे अभी बुनियादी शिक्षा से वंचित हैं और मजदूरी करने के लिए विवश हैं। वृद्धजनों और विकलांगों की दीर्घकालिक तथा सतत् देखभाल करने वाली हमारी मशीनरी और संस्थाएँ अभी भी बेहद सतही हैं। सरकार यहाँ समावेशी विकास सुनिश्चित करने की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रही है। वहीं आम जनमानस में जातीय और क्षेत्र आधारित विभाजन अब भी कुण्डली मारे बैठा हैं। कमजोरियाँ बहुत हैं, फिर भी मानवाधिकार सुनिश्चित करने और सामाजिक न्याय हासिल करने की हमारी संरचना काफी मजबूत है। न्यायपालिका ने इसे बार–बार सुनिश्ति करने का प्रयास किया है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, राष्ट्रीय महिला आयोग तथा राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग, आदि एवं इस क्षेत्र में कार्यरत अनेकानेक स्वयंसेवी तथा हमारी केन्द्र एवं राज्य सरकारें उपयोगी व अर्थपूर्ण कानून बनाकर उन्हें लागू कराने हेतु सक्रिय हैं। सचमुच यही प्रयास हमारी उम्मीदों को आधार प्रदान करते हैं।

सन्दर्भ

(1) आचार्य, नन्द किशोर–अधिकार की संस्कृति, बागदेवी प्रकाशन बीकानेर, (2) भारत में मानवाधिकार संरक्षण, योजना, अप्रैल, 2011 पृ0–28 और 36, (3) कुरुक्षेत्र, मार्च, 2008, (4) आनन्द एवं कुशवाहा त्रिभुवन–भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, पृ0–39, (5) कपूर डॉ0 एस0 के0–मानवाधिकार एवं अन्तर्राष्ट्रीय विधि, 26 वाँ संस्करण, पृ0–666, (6) जनगणना निदेशालय, गृह मंत्रालय, भारत सरकार की रिर्पोट–2012, (7) एमनेस्टी इण्टरनेशनल की वार्षिक रिर्पो 2008 और 2011, (8) पुरोलिया, विनोद–भारतीय परिप्रेक्ष्य में मानवाधिकार, प्रतियोगिता दपर्ण, 2007, (9) बसु डी0 डी0–भारत का संविधान, (10) चन्द्रा विपिन–भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, (11) पायली एम0 वी0–भारत का संविधान।

*असि0 प्रोफेसर, राजनीतिविज्ञान विभाग
राजा हरपाल सिंह महाविद्यालय
सिंगरामऊ, जौनपुर।